मनुष्य-शरीर में आत्मा का निवास स्थान कौनसा है ?

ऋग्वेद (१.२२.१९) का मंत्र है -''इन्द्रस्य युज्य: सखा'' अर्थात् जीवात्मा परमात्मा का योग्य मित्र है । कहने का तात्पर्य वही है जो गोस्वामी तुलसरदासजी कह गये हैं ''ईश्वर-अंश जीव-अविनाशी'' यानि जीवात्मा परमात्मा का अंशहै; पर मानव - शरीर में वह रहता कहाँ है ? यही हमें सोचना हैं ।.... वैसे तो चेतना जीवात्मा की प्रधान प्रवृत्ति है जो सारे शरीर में ऐसे ही दौड़ती - फिरती रहती है जैसे ईश्वर सृष्टि के कण कण में निवास करता है । पर यह कोई समाधान नहीं है ।

हमें यह सोचना है कि आत्मा का निवास स्थान कहाँ है ? जैसे भगवान कण कण में रहते हुये भी बैकुण्ठ में रहते है ठीक वैसे ही जीवात्मा । देह के रोम रोम में रहते हुये भी मस्तिष्क के उस भाग में निवास करता है जिस भाग में स्त्रियाँ बिन्दी लगाती हैं और योगी पुरुष नासिकाग्र पर दृष्टि जमाकर योग-साधना करते हैं । तभी तो निर्मल आत्मा का प्रकाश सिर के पीछे प्रभा मण्डल बनकर घुमता रहता है ।

प्रभा मण्डल के रंग

देवी-देवताओं, अवतारों और पवित्र पुरुषों के सिर के पीछे जो दैवी प्रभा मण्डल घूमता रहता है वह रंग बिरंगा भी होता है । जैसे शांत-प्रकृति के पुरुष का प्रभा-मंण्डल श्वेत, उग्र-प्रकृति के पुरुष का प्रभा-मण्डल लाल, गहन-सुचि वाले देवता का प्रभा-मण्डल नीला और लोकप्रिय - देवता का प्रभा-मण्डल र्स्वणर्वण का होता है ।--- प्रभा-मण्डल आत्मा की झलक होता है । जिसकी जैसी आत्मा उसका वैसा प्रभामण्डल होता है । ऋग्वेद (१०.१३५.७) का मंत्र है -''इदं यमस्य सादनं, देवमानं यदुच्येत'' अर्थात यह शरीर देव-गृह है । यह यम (आत्मा) का निवास स्थान है ।

स्त्रियाँ मस्तक के अग्र-भाग पर लालरंग की बिन्दियाँ इसलिये लगाती है जिससे उनकी पवित्रात्मा पर किसी की कुदृष्टि (गन्दी निगाह) न पड़े और भद्रपुरुष अपने मस्तिष्क के इस अग्रमाग पर चन्दन अगर तगर का टीका इसलिए लगाते है ताकि उनकी पवित्रात्मा पवित्र बनी रहे ।

जीवात्मा तेजोमय होता है । ऋग्वेद (४.२६.१) की साक्षी है- ''अहं मनुरभवं सूर्यश्च'' अर्थात 'में (जिवात्मा) ही मनुष्य हूँ और सूर्य के रुप में हूँ ।' --- आकाश में चमकने वाला सूर्य भी तो परमात्मा की आत्मा का एक अंश है तभी तो सूर्य को 'सूर्यनारायण' कहकर उसकी पूजा करते है । जीवात्मा परमात्मा का ही छोटा भाई है । यह अपने कर्मानुसार भिन्न भिन्न योनियों में जाकर अपने कर्मफल भोगता है । ऋग्वेद (१.१६४.१) का प्रमाण है - ''तस्य भ्राता मध्यमो अस्त्यशन:'' अर्थात 'ईश्वर का छोटा भाई जीवात्मा कर्मफल का भोक्ता है । अंत: मनुष्य को अच्छे कर्म करते रहना चाहिये

।

ऋग्वेद (२.२२.१) की घोषणा है – ''सश्चद् देवो देवं, सत्यमिन्द्रं सत्य इन्दु'' अर्थात 'इस शरीर में अनश्वर–परमात्मा अनश्वर–जीवात्मा से मिला हुआ है ।' तभी कहा गया है कि स्वयं को सुधारो, यही ईश्वर की पूजा है, अर्चना है, आराधना है, कीर्तन है, गायन है और यही ईश्वर की नवधा–भक्ति भी है । देवर्षि नारद इस सत्य के प्रमाण है । आप भी नारद जी का आदर्श अपनायइये और परमात्मा के प्रिय बन जाईये ।

– रचनाकार
आचार्य कवि
श्री रसिक बिहारी मंजुल
साहित्य–कला–सरस्वती
संपादक ''अध्यात्मअमृत'' द्विमासिका
फ्लैट नं १०७ व १०८, ई–१६, सैक्टर–८,
रोहिणी, दिल्ली – ११० ०८५
मोबाईल : ९९९०१४२२४२